इकाई 12 काव्य वाचन और विश्लेषण : भारतेन्दु हरिश्चंद्र और अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की चयनित कविताओं की व्याख्या

12.3 प्रिय प्रवास के चयनित अंशों की व्याख्या
12.3.1 प्रिय प्रवास का उद्देश्य

12.4 सारांश

12.5 उपयोगी पुस्तकें

12.0 उद्देश्य

भारतेन्दु हरिश्चंद्र के नाम पर आधुनिक हिंदी साहित्य के पहले चरण का नाम 'भारतेन्दु युग' रखा गया है। इससे भारतेन्दु की महत्ता सर्वस्वीकृत है। हिंदी भाषा और साहित्य दोनों पर भारतेन्दु के सर्वाधिक प्रभाव को साहित्य के इतिहासकारों ने स्वीकारा है। इसी तरह अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' भी आधुनिक हिंदी कविता के एक महत्वपूर्ण कवि हैं। दोनों कवियों के रचना-संसार से हिंदी काव्य समृद्ध हुआ है। इस इकाई में आप दोनों कवियों की काव्यकृतियों के चयनित अंशों का पाठ करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप उल्लिखित कवियों की कविताओं की भाव-भूमि से परिचित हो सकेंगेः

- इन कविताओं के आधार पर कवियों के देशप्रेम की भावना के संबंध में अवगत हो सकेंगे;
- कविताओं का रसास्वादन कर सकेंगे;
- कवियों की भाषिक विशेषताएँ समझ सकेंगे;
- इन कविताओं के माध्यम से कवि की चिंताओं की चर्चा कर सकेंगे;
- इन कविताओं के काव्य-सौष्ठव का स्वरूप जान सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

भारतेन्दु हरिश्चंद्र (1850-1885) बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न साहित्यकार हैं। उन्होने कविता के क्षेत्र में अपनी कवि प्रतिभा का परिचय दिया है। साथ ही, आधुनिक हिंदी गद्य के निर्माता के रूप में उनकी प्रसिद्धि रही है। उनके प्रयास और प्रेरणा के फलस्वरूप गद्य की विविध विधाओं-नाटक, निबंध, आलोचना, उपन्यास, यात्रा-वृत्त आदि का श्रीगणेश हुआ। हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में भी उन्होने प्रतिमान स्थापित किए। उनकी काव्य कृतियों की संख्या लगभग सत्तर हैं। इनमें 'प्रेम मालिका', 'प्रेम फुलवारी', 'प्रेम सरोवर', 'विनय प्रेम पचासा', 'गीत गोविंदानंद', 'वर्षा-विनोद', 'वेणु गीति' आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। भारतेन्दु की कविताओं के विषय विविध हैं। भक्ति, श्रृंगारिकता, देश-प्रेम, सामाजिक परिवेश,

प्रकृति आदि विभिन्न संदर्भों पर आधारित इनकी कविताओं में एक ओर प्राचीन काव्य परंपरा का पालन किया गया है तो दूसरी ओर नवीन चेतना और आधुनिक काव्यधारा का प्रवर्तन हुआ है। राजभक्ति, देशभक्ति, दास्यभाव और माधुर्य भाव आदि के चित्रण भी मिलते हैं। अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (1865-1947) द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि हैं। उन्होने कविता, उपन्यास, निबंध और आलोचना के क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है लेकिन 'हरिऔध' जी को कवि के रूप में सर्वाधिक ख्याति प्राप्त हुई है। उनकी काव्य कृतियों में 'प्रियप्रवास' का मुख्य स्थान है। इसे खड़ी बोली का प्रथम महाकाव्य माना गया है। इनकी अपूर्व साहित्य-सेवा के कारण ही हिंदी साहित्य में इन्हें 'कवि सम्राट' के रूप में स्मरण किया जाता है। कवि की अन्य रचनाओं में 'रसकलस','चुभते चौपद', 'चोखे चौपदे' और 'पारिजात' उल्लेखनीय हैं। इस कवि के काव्य में विभिन्न विषयों को स्थान प्राप्त हुआ है, जिनमें भक्ति, नीति और प्रकृति मुख्य हैं। भक्ति काव्य के अतिरिक्त उन्होने नीति की भी रचनाएँ की हैं। गद्य और पद्य दोनों क्षेत्रों में हरिऔध जी की गति एक-जैसी है। भारतेन्दु जी की तरह हरिऔध जी ने भी ब्रजभाषा और खड़ी बोली में कविता सृजन किया है। 'रसकलस' की भाषा ब्रजभाषा है। कविता के क्षेत्र में उन्हें खड़ी बोली का संस्थापक कवि कहा जाता है। उनके काव्य में द्विवेदी-युग की सभी प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती हैं।

12.2 भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की चयनित कविताओं की व्याख्या

(काव्य वाचन तथा संदर्भ सहित व्याख्या)

एक

नैना वह छवि नाहिन भूलै।
दया भरी चहुँ दिसि की चितवनि नैन कमल दल फूले।
वह आवनि वह हंसनि छबीली वह मुस्कनि चित चोरै।
वह बतरानि मुरलि हरि की वह देखन चहूँ कोरे।
वह धीरी गति कमल फिरावन कर लै गायन पाछै।
वह बीरी मुख वेनु बजावति पीत पिछौरी काछे।
पर बस भए फिरत है नैना एक छन टरत न टारे।
''हरीचंद'' ऐसी छवि निरखत तन मन धन सब हारे।

संदर्भ और प्रसंग :

भारतेन्दु हरिश्चंद्र की काव्य-कृति 'प्रेम-मालिका' (प्रकाशन वर्ष 1871 ई.) से उपरोक्त पद अवतरित किया गया है। 'प्रेम-मालिका' में यह पद कीर्तन शीर्शक के अंतर्गत है। कवि द्वारा रचित कीर्तनों के संग्रह को 'प्रेम-मालिका' के नाम से जाना जाता है। भारतेन्दु को वैष्णव भक्ति विरासत में मिली। सामाजिक सरोकार की रचनाओं के साथ उनकी भक्तिपरक रचनाओं की बहुत बड़ी संख्या है। भारतेन्दु की रचनाओं में भक्ति एवं रीति कालीन काव्य प्रवृत्तियों का प्रभाव पाया जाता है।

व्याख्या :

भारतेन्दु ने अवतरित पद में कृष्ण के रूप-सौन्दर्य का चित्रण किया है। कवि ने कहा है कि भक्त के नेत्रों के मार्ग से हृदय में मनोहर कृष्ण आ बसे हैं। वह दिन-रात उस कृपापूर्ण दृष्टि का ही स्मरण करता है जिसका सौन्दर्य याचक अथवा देखने वाले के नेत्रों को तृप्त कर देता है। कृष्ण की चंचल चितवन हंसी और मुसकराकर नेत्रों की कोर से चारों ओर देख लेने की सुंदर छवि चित्त को चुराने वाली है। हँस-हँस कर बातें करते हुए कृष्ण जब हाथों में कमल फूल धीरे-धीरे फिराते हैं भला उस श्याम को कौन विस्मृत कर सकता है। अपने ओष्ठों को अर्द्ध गोलाकार आकृति दे कर बांसुरी

शब्दार्थः

नाहिन-नहीं, चहुं- चारों ओर, चित चोरै-दिल चुराने वाले, बतरानि-बात करने की इच्छा, पिछौरी-पीछे की ओर, निरखत-देखकर

बजाते श्याम की छटा का दर्शन जिसे मिल जाए वह अपनी दृष्टि उनसे फिरा नहीं सकता। पीले वस्त्र धारण करने वाले कृष्ण के सौन्दर्य ने देखने वाले के नेत्रों को दास बना लिया है। कवि 'हरीचंद' (हरिश्चंद्र) कहते हैं कि ऐसे मनोहर कृष्ण को टकटकी लगाकर देखने में परम सुख है। कृष्ण के इस सौन्दर्य पर मेरा तन, मन, धन यानी सर्वस्व न्योछावर है।

विशेष :

1. अवतरित पद में कवि का कृष्ण प्रेम व्यक्त हुआ है। कृष्ण के अपरूप सौन्दर्य चित्रण के बहाने अपनी भक्तिभावना का परिचय प्रस्तुत किया है। इस पद से गुजर कर पाठकों को सूरदास के कृष्ण का सौन्दर्य चित्रण स्मरण हो आना स्वाभाविक है।
2. सरल, सहज और प्रवाहमयी ब्रजभाषा का सुंदर प्रयोग किया गया है।
3. यह पद राग गौरी में रचित है। अतः गेयात्मकता की -दृष्टि से पद का महत्व है।

दो

तुम्है तो पतितन ही सों प्रीति।
लोकरु बेद विरूद्ध चलाई क्यों यह उलटी रीति।
सब विधि जनत हो निश्चय करि तुमसों छिप्यौ न नेक।
बेद-पुरान प्रभाव तजन को मेरो यह अविवेक।
महा पतित सब धर्म बिवर्जित श्रुतिनिंदक अध-खान।
मरजादा ते रहित मनस्वी मानत कहु न प्रभान।
जानत भए अजान काहे क्यों रहे तेल दै कान।
तुम्हें छोड़ि जग को नहिं जो मोहि विगर्यो करत बखान।
बलिहारी यह रीझि शबरी कहाँ खुटानी आय।
'हरिचंद' सो नेप निबाहत हरि कहु कही न आय।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या :

भक्ति के इस पद में हम भक्त की उलाहनाएँ देख सकते हैं। भारतेन्दु कृष्ण से शिकायत करते हैं कि आपको तो पतितों से प्रेम है फिर लोक और वेद के विरुद्ध चल रही उल्टी रीति पर आपका ध्यान कैसे नहीं है। आप पतितों के कृपालु हैं। आप सर्व ज्ञाता ईश्वर हैं, आपसे कुछ छिपा भी तो नहीं हैं। आप पतितों के उद्धारक हैं। इन पतितों में स्वयं को सम्मिलित करते हुए भारतेन्दु कहते हैं कि वेद, पुराण आदि त्याग देने वाले अविवेकी महापतितों की कोटि में आते हैं। प्राचीन ज्ञान के भंडार श्रुतियों की निंदा करने वाले पापी मर्यादाविहीन हैं। सभी धर्मों से विरत हैं। ऐसे अधम मनस्वी कहला रहे हैं। कवि का निवेदन है कि हे प्रभु आप सब कुछ जानते हुए भी अनजान बने हुए हैं। आपके इस प्रकार प्रतिक्रिया विहीन होकर बैठे रहने से मेरा क्या होगा, जबकि आपके अतिरिक्त मेरी बिगड़ी को बनानेवाला और कोई है ही नहीं। आप मुझ पर कृपा कीजिए। आपकी इस कृपा पर मैं न्यौछावर हूँ। 'हरिचंद' जैसे अधम पर हरिकृपा का बखान नहीं किया जा सकता।

शब्दार्थ :

लोक-लोक के, जानत-जानते हो, ताजन-छोडकर, मरजादा-मर्यादा, अंजान-अनजान

विशेष :

1. यह पद दास्य भाव का है। कवि की दीनता का वर्णन है। गोस्वामी तुलसीदास की भक्ति भावना का प्रभाव इस पद में देखा जा सकता है। साथ ही बिहारीलाल की भक्ति का प्रभाव "कौन भांति रहिए बिरदु ---" का भी प्रभाव परिलक्षित किया जा सकता है।
2. कवि का कृष्ण के प्रति एकनिष्ठ प्रेम अभिव्यक्त हुआ है।
3. चलती ब्रजभाषा को साहित्यिक ब्रजभाषा का रूप प्रदान किया गया है।
4. यह पद राग सारंग में है अतः गेयात्मक है।

तीन

रहै क्यों एक म्यान असि दोय।
जिन नैनन में हरि रस छायो तेहि क्यों भाखै कोय।
जा तन-मन मैं रति रहे मोहन तहाँ ग्यान का आवै।
चाहो जितनी बात प्रबोधो ह्याँ को जो पति आवै।
अमृत खाइ अब देखि इनारून को मूरख जो भूले।
'हरिचंद' ब्रज ले कटली बन काटौ तो फिरि फूलै।

संदर्भ और प्रसंग :

भारतेन्दु हरिश्चंद्र विरचित 'प्रेम फुलवारी' (1883 ई) में संकलित इस पद में एक ओर जहां भक्ति कालीन कवियों की भक्तिधारा का प्रतिबिंब मिलता है, वहीं रीतिकालीन प्रवृत्ति का पुट भी परिलक्षित होता है। अंतर यह है कि इनमें रीतिकालीन काव्य के समान ऊहात्मक वर्णन नहीं है। इस छोटे से काव्य-संग्रह के समर्पण में कवि ने कृष्ण को बड़ा सैलानी कहा है। नदियों के तट पर पर्यटन करने वाले श्रीकृष्ण से कवि का आग्रह है वे कभी उसकी प्रेम फुलवारी में आ जाएँ तो जीवन धन्य हो जाएगा। इस पद में कवि ने प्रेम का बड़ा ही स्वाभाविक वर्णन किया है।

व्याख्या :

भारतेन्दु कहते हैं कि यह तन-मन केवल मोहन को समर्पित है। इसमें किसी दूसरे के लिए कोई स्थान नहीं है। जब यह पूर्णतया निश्चित हो चुका है तो एक म्यान में दो तलवारें कैसे रह सकती हैं ? जिन नैनों में हरि की छवि बस गई है, उसमें दूसरे की छवि नहीं समा सकती। जिस तन-मन में श्याम समा गए हों वहाँ ज्ञान के लिए जगह नहीं। अर्थात जिस हृदय में मोहन की भक्ति बसी हो वहाँ ज्ञान का क्या काम? इस संबंध में गुणीजन चाहें जितना समझाएँ कवि समझने के लिए तैयार नहीं है क्योंकि भक्ति श्रद्धा के वशीभूत है। ज्ञान से भक्ति नहीं होती। अर्थात, ज्ञान कभी भी भक्ति का स्थान ले नहीं सकता। हृदय पक्ष पर बुद्धि पक्ष हावी नहीं हो सकता। चाहे कितनी ही बातों पर विश्वास हो जाये लेकिन यह कैसे माना जा सकता है कि अमृत को छोड़कर कोई विष की चाह कर रहा है। ऐसा तो कोई मूर्ख ही कर सकता है। भारतेन्दु कहते हैं यानि राधा या नायिका कहती है कि जिस प्रकार केले के वृक्ष को जितना काटे जाओ, वह उतना ही फैलता है, उसी प्रकार श्याम का प्रेम है। इस प्रेम को जितना भी दूर करने का प्रयास किया जाएगा उतना ही वह बढ़ता जाएगा।

विशेष :

1. इस पद में प्रेम की महत्ता स्थापित की गई है।
2. इस पद के वाचन से हमें सूर की रचना की याद आती है। जिस प्रकार गोपियाँ उद्धव से प्रेम की व्याख्या करती हैं और अपने तर्कपूर्ण उत्तर से उद्धव के ज्ञान और योग मार्ग का खंडन करती हैं, उसी प्रकार का भाव इस पद में समाहित है।

3. ब्रजभाषा का सुंदर प्रयोग मिलता है।

4. रीतिकालीन कवियों के समान इस पद में प्रेम का ऊहात्मक वर्णन नहीं है।

चार

प्रेम में मीन मेष कछूँ नाहिं।
अति ही सरल पंथ यह सूधो छल नहिं जाके माही।
हिंसा द्वेष इरखा मत्सर मद स्वारथ की बातै।
कबहूँ याके निकट न आवै छल प्रपंच की धातै।
सहज सुभाविक रहनि प्रेम की प्रीतम सुख सुखकारी।
अपुनो कोटि कोटि सुख पिय के तिनकहि पर बलिहारी।
जहँ ने ज्ञान अभिमान नेम ब्रत विशय- वासना आवै।
रीझ खीज दोऊ पीतम की मन आनंद बढ़ावै।
परमारथ स्वारथ दोऊ पीतम और जगत नहिं जाने।
हरिश्चंद यह प्रेम-रीति कोउ विरले ही पहिचाने।

संदर्भ और प्रसंग :

भारतेन्दु कृत 'विनय प्रेम पचासा' (1881 ई.) से अवतरित अंश लिया गया है। इस पद में प्रेम की सरलता और निश्छलता पर प्रकाश डाला गया है। इसमें प्रेम की शुद्धता की व्याख्या की गई है। सच्चे प्रेम की परिभाषा भी इस पद में प्रस्तुत की गई है।

व्याख्या :

प्रेम में न कोई खोट निकाली जाती है और न कोई दोष ढूंढा जाता है। इसमें छल -कपट आदि का कोई स्थान नहीं है। इसका मार्ग अत्यंत सरल होता है। हिंसा, ईर्ष्या, द्वेष, दुर्भावना और अहंकार का भी प्रेम-मार्ग में कोई स्थान नहीं है। प्रेम सहज है और हिंसा, द्वेष आदि से उसका कोई संबंध नहीं होता है। स्वाभाविकता और नैसर्गिकता प्रेम की विशेषताएँ प्रीतम के लिए परम सुखदायी हैं। प्रिय के छोटे-से सुख के लिए अपने अनगिनत सुखों को न्यौछावर करने वाला ही सच्चा प्रेमी कहलाता है। संसार के सभी प्रपंचों से प्रेम मुक्त होता है। उसमें अभिमान, ज्ञान का बखान, रीति, नियम, व्रत, लोभ, विषय, वासना आदि नहीं होते। प्रियतम पर प्रिया चाहे रीझे या खीझे, हर हाल में प्रेम पलटा है। प्रिया को आनंद प्राप्त होता है। संसार जिस स्वार्थ-परमार्थ के जटिल प्रश्नों से उलझा रहता है,प्रेम उससे अनजान रहता है, अपरिचित होता है। प्रेम अपने जिस आनंद संसार में डूबा है यह जात उससे अनजान है। कवि हरिचन्द को प्रतीत होता है कि इस प्रेम रीति से कोई-कोई ही परिचित हो पाता है बाकी संसार तो अपनी विषय-वासना में लिप्त रहता है।

विशेष :

1. रीति कालीन कवि घनानन्द के निम्नलिखित पद का प्रभाव पाया जाता है -"अति सूधो सनेह को मारग है, जहां नैकु सयानप बांक नहीं।" प्रेमी का अपना कोई सुख नहीं होता। प्रियतम का सुख ही उसका सुख होता है। जहां रंच मात्र का भी छल, कपट, ईर्ष्या, द्वेष आदि भावनाएँ होती हैं, वहाँ प्रेम नहीं होता।

2. प्रेम की दुनिया की विशिष्टताएँ इस पद से स्पष्ट होती हैं।

3. कवित्त छंद में यह पद रचित है।

4. शुद्ध और परिनिष्ठित ब्रजभाषा का प्रयोग किया गया है।

पाँच

मुँह जब लागै तब नहि छूटै।
जाति मान धन सब कुछ लूटै।
पागल करि मोहि करे खराब
क्यों सखि साजन नहीं शराब।

संदर्भ और प्रसंग :

भारतेन्दु का युग परिवर्तन का युग था। तत्कालीन परिस्थितियों ने कवियों में चेतना को प्रसरित किया है। समाज को जगाने के लिए कवियों ने काव्य रचनाएँ कीं। भारतेन्दु सामाजिक बुराइयों को दूर करके देश में नयी स्फूर्ति का संचार करना चाहते थे। उनकी काव्य रचना की प्रवृत्ति में परिवर्तन आया। पारंपरिक प्रवृत्तियों के स्थान पर नयी प्रवृत्तियों ने स्थान पाया। मुकरियों की रचना में इन्हीं प्रवृत्तियों को देखा जा सकता है। 'नए जमाने की मुकरी' से उद्धृत इस मुकरी में कवि ने शराब पीने की बुराइयाँ कीं ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया है।

व्याख्या:

सखी पहले पहेली पूछती है। फिर स्पष्ट करती है कि शराब ऐसी चीज है जब किसी के मुँह लग जाती है अर्थात जब किसी को इसकी आदत पड़ जाती है तब जाति, मान, मर्यादा, धन सब लूट लेती है। यह व्यक्ति को पागल बना देती है। इसकी आदत पड़ जाने से व्यक्ति का जीवन बर्बाद हो जाता है।

विशेष : मुकरियों की रचना करके भारतेन्दु हरिश्चंद्र जनता में जागृति लाना चाहते थे। शराब पीने से समाज में जो अवनति आ रही थी, उसे दूर करने के लिए कवि ने व्यंग्य भरी मुकरियों की रचनाएँ कीं।

छः

भीतर भीतर सब रस चूसै।
हंसि हंसि के तन मन धन मूँसै।
जाहिर बातन में अति तेज
क्यों सखि साजन नहीं अंग्रेज।

संदर्भ और प्रसंग :

मुकरियों के लेखन से भारतेन्दु का जन-मन में चेतना प्रसरित करना चाहते थे। उनकी मुकरियों ने न केवल पढे-लिखे लोगों में बल्कि अशिक्षितों के बीच भी बहुत ही चर्चित और लोकप्रिय रहीं। भारतेन्दु ने साहित्य की विविध विधाओं के साथ ही मुकरी को भी नया रूप प्रदान किया। उन्होने शुद्ध साहित्यिक मुकरियों को देश की तत्कालीन दशाओं के साथ जोड़ा। अंग्रेजों के शोषण से भरपूर शासन के संबंध में इतने सीधे तौर पर कहने का साहस भारतेन्दु में दिखाई पड़ता है।

व्याख्या :

ऊपर से अत्यंत भद्र और शालीन दिखने वाले अंग्रेजों के लिए भारतेन्दु ने 'नए जमाने की मुकरी' (1884 ई.) में उन्हें चतुर और चालाक कहा है। प्रत्यक्ष रूप में लच्छेदार भाषा में बोलने वाले अंग्रेजों ने इस देश को जी भर कर लूटा। छल-कपट और धोखे से इस देश को कंगाल बनाकर उन्होने अपने को धन-धान्य से समृद्ध किया। भारत को उन्होंने हर

स्तर पर क्षति पहुंचाई है। लूट और दमन अंग्रेजों के अस्त्र रहे हैं। भारतेन्दु ने उसका खुलासा किया है।

विशेष :

अपने शोषण को छल-कपट और धूर्तता भरी बातों के आवरण में छिपाने वाले अंग्रेजों के वास्तविक चरित्र को इस मुकरी में उद्घाटित किया गया है। जन सामान्य के लिए अत्यंत सुबोध भाषा में भारतेन्दु ने मुकरियाँ लिखी हैं। मुकरियों में निहित व्यंग्य चेतना प्रभावशाली है।

सात

नई नई नित तान सुनावै
अपने जाल में जगत फंसावै ।
नित नित हमै कराई बल सून
क्यों सखि साजन नहीं कानून ।

संदर्भ और प्रसंग :

नये जमाने की मुकरी (1884 ई.) के प्रकाशन से भारतेन्दु के परिपक्व विचार मिलते हैं तथा इसमें जन सामान्य में दूरगामी प्रभाव उत्पन्न करने की शक्ति परिलक्षित होती है। इस मुकरी में अंग्रेजों की कानून व्यवस्था पर व्यंग्य किया गया है।

व्याख्या :

अंग्रेजों द्वारा भारत को लूटने में जिन उपकरणों का प्रयोग हुआ उनमें कानून महत्वपूर्ण था। अंग्रेज शासकों ने इस देश के दोहन के लिए मनचाहे कानून बनाए। इन कानूनों के तहत अपनी सुविधानुसार वे भारतीयों पर लूट की लीला चलाते थे। कहना न होगा कि सारे कानून उनके फायदे के लिए बने थे। अपनी आवश्यकता के अनुसार वे नित नये कानून भी बनाकर भारतीयों को गुलामी के जाल में फँसाते रहते थे। कानून के मकड़जाल में फंसे छटपटाते भारतीयों की पीड़ा को इस मुकरी के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है।

विशेष :

कानून के सहारे अंग्रेज भारतीयों की लूट, दमन और शोषण करते थे जिसका चित्रण इस मुकरी में किया गया है। अंग्रेजों द्वारा प्रवर्तित कानून व्यवस्था पर व्यंग्य किया गया है। भाषा सहज, सरल और सुबोध है।

उद्देश्य

इस अंश में भारतेन्दु की कविताओं की सामान्य प्रवृत्तियों से परिचित कराना और उनकी कविताओं की मूल संवेदना पर विचार करना मुख्य उद्देश्य है। भक्तिकालीन, रीति कालीन और आधुनिक चेतना से सम्पन्न भारतेन्दु की कविता से हिंदी काव्य संसार समृद्ध हुआ है। भारतेन्दु के लिए काव्य केवल कला और मनोरंजन का माध्यम नहीं था, उन्होने इसे जनचेतना को प्रसरित करने का महत्वपूर्ण साधन भी सिद्ध किया। पुनर्जागरण काल में आप भारतेन्दु के अवदान पर विचार कर सकते हैं। इसमें उपरोक्त पदों की महती भूमिका हो सकती है।

बोध प्रश्न-1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. भारतेन्दु हरिश्चंद्र की दृष्टि में प्रेम की परिभाषा क्या है ?

.....

.....

.....

2. औपनिवेशिक शासन में भारतेन्दु की मुकरियों की भूमिका स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

अभ्यास :

1 भारतेन्दु हरिश्चंद्र की काव्यगत विशेषताओं को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

12.3 प्रिय प्रवास के चयनित अंशों की व्याख्या

एक

अतः करूंगा यह कार्य मैं स्वयं।
स्व-हस्त में दुर्लभ प्राण को लिय।
स्व-जाति औ जन्म धरा-निमित मैं।
न भीत दूंगा विकराल व्याल से।
सदा करूंगा अपमृत्यु सामना।
स-भीत दूंगा न सुरेन्द्रवज्र से।
कभी करूंगा अवहेलना न मैं।
प्रधान-धर्मांग परोपकारक की।
प्रवाह होते तक शेष श्वास के।
सशक्त होते तक एक लोम के
किया करूंगा हित सर्व-भूत का।
('ग्यारहवें सर्ग' से)

शब्दार्थ :

1) धरा- पृथ्वी 2) निमित- के लिए 3) व्याल- सर्प 4) भीत- डर 5) सुरेन्द्रवज्र- इन्द्र का वज्र

प्रसंग और संदर्भ : 'प्रिय प्रवास' हरिऔध जी की सबसे प्रसिद्ध रचना है। इस रचना के माध्यम से कवि ने समसामयिक समस्याओं को ही स्थान दिया है। यहां हम इस रचना के विभिन्न सर्गों से कुछ उन अंशों का वाचन करेंगे जिनमें कवि ने श्रीकृष्ण के लोकोपकारक तथा समाज सेवी रूप को प्रस्तुत किया है।

व्याख्या :

उद्धव को सुनाते हुए वह वृद्ध ग्वाल कहने लगे कि इसलिए अपने प्राणों को हथेली पर रख कर मैं स्वयं ही यह कार्य करूंगा। अपनी जाति तथा जन्मभूमि के लिए मैं इस भयंकर सर्प से कभी नहीं डरूँगा और निश्चित ही उस सर्प के आतंक से ब्रजवासियों को मुक्त करूंगा।

कवि वर्णन कर रहा है कि मैं सदैव बुरी से बुरी मृत्यु का सामना करूंगा, इंद्र के वज्र से भी भयभीत नहीं होऊँगा। धर्म के प्रधान तत्व परोपकार का मैं कभी भी तिरस्कार नहीं करूंगा। यह इसलिए कि मैं इन्हीं कार्यों को सफल बनाने आया हूँ।

विशेष :

इस अंश में कृष्ण के माध्यम से कवि ने अपनी युगीन समस्याओं की ओर संकेत किया है। कृष्ण के लोकोपकारी रूप को चित्रित किया है। इस अवतरित अंश में संघर्ष चेतना का भी अंकन किया गया है।

भाषा शुद्ध खड़ी बोली और तत्सम प्रधान है।

दो

संसार में सकल-काल नृरत्न ऐसे।
है हो गये अवनि है जिनकी कृतज्ञा।
सारे अपूर्व-गुण हैं उनके बताते।
सच्चे नृरत्न हरि भी इस काल के हैं।
बातें बड़ी सरस के कहते विहारी।
छोटे-बड़े सकल का हित चाहते थे।
अत्यंत प्यार दिखला मिलते सबों से
वे थे सहायक बड़े दुख के दिनों में

• • •

थे राजपुत्र उनमें मद था न तो थी।
वे दीन के सदन थे अधिकांश जाते।
बातें मनोरम सुना दुख जानते थे।
औ थे विमाचन उसे करते कृपा से।
रोगी दुखी विपद-आपद में पड़ों की।
सेवा सदैव करते निज हस्त से थे।
ऐसा निकेत ब्रज में न मुझे दिखाया
कोरे जहां दुखित हो पर वे न होवें। ('बारहवें सर्ग से')

संदर्भ और प्रसंग :

हरिऔध जी की प्रसिद्ध काव्य-कृति 'प्रिय प्रवास' के बारहवें सर्ग से अवतरित अंश लिया गया है। इस अंश में कृष्ण की महानता का गुणगान किया गया है।

व्याख्या :

कवि वर्णन कर रहा है कि संसार में सदैव ऐसे श्रेष्ठ महापुरुष जन्म लेते रहे हैं जिनके परम पवित्र और महान कार्यों से पृथ्वी कृतज्ञ होती आई है। कृष्ण के संपूर्ण अनुपम गुण वही बता सकते हैं कि वे इस युग के महान व्यक्ति हैं और उनके कर्म भी इस बात के सूचक हैं कि भविष्य मे वे अत्यंत महान व्यक्ति बनेंगे और संपूर्ण विश्व सदैव स्मरण किया करता है।

पुनः कवि का कहना है कि कृष्ण ने जो महान कार्य करके दिखाए हैं उन्हें कोई भी व्यक्ति कभी कर नहीं सकता है। कहाँ तो इतने कठिन कार्य और कहाँ उनकी बारह वर्ष की छोटी अवस्था, हे उद्धव जब इस छूती अवस्था में उन्होने ऐसे कार्य कर दिखाये हैं तो फिर क्यों न वे इस युग के महापुरुष होंगे। कहने का आशय यह है कि ऐसे व्यक्ति ही महापुरुष होते हैं।

कवि का कहना है कि कृष्ण अत्यंत मीठी और कर्णप्रिय बातें सुनाया करते थे। वे छोटे-बड़े सबके कल्याण की कामना करते थे। सबसे अत्यंत प्रेमपूर्वक मिलते थे। ब्रजवासियों के दुख से उनका हृदय

शब्दार्थ :

1) सकल- सब 2) नृरत्न- पुरुषों में श्रेष्ठ 3) अवनि - पृथ्वी 4) मद- घमंड 5) दीन- गरीब 6) सदन - घर 7) निकेट - घर

विदीर्ण हो उठता था। उस समय वे सब कुछ भूल जाते थे। दुखी मनुष्य का दुख दूर करने में लग जाते थे। हे उद्धव, हम ऐसे ब्रजरत्न को खोकर कैसे धैर्य धारण कर पाएंगे।

कृष्ण थे तो राजकुमार लेकिन उनमें रंच मात्र का अहंकार न था। वे प्रायः गरीबों के घर जाया करते थे। उनसे अत्यंत मधुर वाणी में उनका दुख पूछा करते थे और फिर अपनी कृपा से उस दुख को दूर करते थे। उनकी रग-रग में पर- सेवा की भावना भरी रहती थी।

कृष्ण सर्वत्र रोगियों तथा विपदाओं से घिरे लोगों की अपने हाथों से सेवा किया करते थे। मैंने ब्रज का एक भी घर ऐसा नहीं देखा जहां पर वे दुखी मनुष्यों के दुख का विनाश करने न गए हों। जहां भी कोई दुखी दिखता था वहाँ वे अवश्य पहुँच जाते थे और अपनी संपूर्ण शक्ति के साथ उसका कष्ट हर लेते थे।

विशेष :

कृष्ण को महापुरुष के रूप में चित्रित किया गया है। उनके परोपकारी, सेवा-भाव, निरहंकारी, मृदुभाषी, जनकल्याणकारी आदि रूपों का चित्रण किया गया है। भाषा शुद्ध खड़ी बोली और तत्सम प्रधान है।

तीन

तदपि चित्त बना है श्याम का चारू ऐसा।
वह निज-सुहृदों, से थे स्वयं हार खाते।
वह कतिपय जीते खेल को थे जिताते।
सफलित करने को बालकों में उमंगे।

• • •

चरित्र ऐसा उनका विचित्र है।
प्रविष्ट होती जिसमें न बुद्धि है।
सदा बनाती मन को विमुग्ध है।
अलौलिक लोकमयी गुणावली।

('तेरहवें सर्ग से')

शब्दार्थ :

1)चित्त- हृदय 2) श्याम- श्रीकृष्ण 3) चारू - सुंदर 4) प्रविष्ट- प्रवेश

प्रसंग और संदर्भ : अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध के काव्य 'प्रिय प्रवास' के तेरहवें सर्ग से अवतरित इस अंश में कवि ने कहा है कि कृष्ण विराट हृदय के थे।

व्याख्या :

बड़े से बड़े कुशल खिलाड़ी भी कृष्ण से जीत नहीं सकता था, लेकिन कृष्ण का चित्त इतना सुंदर था कि वे जान-बुझ कर अपने प्रिय आत्मीय सखाओं से हार जाते थे ताकि उनके मित्रों को खुशी मिले। वे अत्यंत कोमल हृदय के थे। अपने साथियों को जीता कर उनके हृदय में उमंगें भरना चाहते थे।

उनका हृदय अत्यंत विचित्र था। उसमें वे बुद्धि का प्रवेश होने देना नहीं चाहते थे। उनके आचरण से लोगों का मन मुग्ध हुआ करता था। उनके महामानवोचित गुण अलौकिक थे तथा लोकमंगल की भावना उनमें विद्यमान थी।

चार

संलग्न हो विविध कितने सांत्वना कार्य में भी।
वे सेवा भी सतत करती वृद्ध रोगी जनों की।
दीनों, हीनों, निकल विधवा आदि को मानती थीं।
पूजी जाती ब्रज अवनि में देवियों सी अतरू थीं।
खो देती कलह-जनिता आधि के दुर्गुणों को।
धो देती थीं मलिन मन की व्यापिनी कालिमाएँ।
बो देती थीं हृदय तल में बीज भावज्ञता का।
वे थीं चिन्ता विजित गृह में शांति धारा बहातीं।
आटा चींटी विहग गण थे वारि औ-अन्न पाते।
देखी जाती सदय उनकी -दृष्टि कीटादि में भी।
पत्तों को भी न तरू-वर के वे वृथा तोड़ती थीं।
जी से वे थी निरंत रहती भूत-संवर्द्धना में।
'सत्रहवें सर्ग से'

प्रसंग और संदर्भ : अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध के काव्य 'प्रिय प्रवास' के सत्रहवें सर्ग में कवि ने राधा को जन सेविका के रूप में प्रस्तुत किया है। ब्रज के तमाम लोगों की सेवा में ही राधा अपना सुख मानती हैं ।

व्याख्या :

हरिऔध जी ने राधा की जनसेविका रूप का चित्रण करते हुए कहा है कि विविध प्रकार के सत्कर्मो में लीन रहने वाली राधा ने वृद्धों और रोगियों की सेवा में अपने को उत्सर्ग कर दिया था। दीन-हीन लोगों, विधवाओं के प्रति उनका आचरण अत्यंत आत्मीयता से भरपूर हुआ करता था। उन्हें हर प्रकार से सुखी और प्रफुल्ल चित्त रखने के लिए भरसक प्रयास करती थीं। बड़ों के प्रति उनका आदर और सम्मान सदैव बना रहता था। उनके इन दुर्लभ मानवीय गुणों के चलते वे ब्रजबालाओं में देवी के रूप में पूजी जाती थीं। इस मान तथा सम्मान से भी राधा कभी अपने को विशिष्ट नहीं मानती थीं। राधा हमेशा कृष्ण का स्मरण भी करती थीं।

कवि ने आगे यह भी कहा है कि राधा झगड़ों से उत्पन्न मानसिक व्यथाओं को सदैव दूर कर देती थीं। मन में फैले दोषों को भी धो डालती थीं। सबके मन में समरसता बनी रहे, इसका प्रयास करती थीं। चिंताग्रस्त लोगों के मन में शांति स्थापना हेतु प्रयत्न करती थीं। सभी को प्रसन्न वदन देखने के लिए नानाविध कोशिश करती थीं। कहा जा सकता है कि लोक सेवा से उन्हें परम संतोष की प्राप्ति होती थी।

कवि का कहना है कि जब जीव स्वयं दुखी होता है तो जीवों की भी पीड़ा को भलीभाँति महसूस कर पाता है और उनके कष्टों को दूर करने के लिए आगे बढ़ता है। राधा ने इस कर्म को अपना धर्म मान

शब्दार्थ :

1) संलग्न- लगी रहती 2) विविध- अनेक प्रकार के 3) विहग - पक्ष 4) सदप- दया के साथ 5) अवनि- पृथ्वी 6) तल - अंदर 7) वारि- पानी 8) वृथा- व्यर्थ में

लिया था। राह पर गुजरने वाली चींटियों को देख कर राधा आटा खिलाया करती थीं। पक्षी आदि को अन्न और जल दिया करती थीं। बड़े से बड़े पेड़ के पत्तों को भी व्यर्थ तोड़ना

नहीं चाहती थीं। यह इसलिए कि पत्ते पेड़ के अंश होते हैं। पत्ते तोड़े जाएँ तो वृक्षों को कष्ट पहुंचता है। इस प्रकार राधा नित्य ही जीव मात्र की उन्नति में डूबी रहती थीं।

विशेष :

इस अंश में जनसेविका राधा का उदात्त चित्रण किया गया है। कवि ने राधा को मनुष्य से देवी रूप में पहुंचाया है। मनुष्य अपने प्रयास और सतकर्मों से देवत्व की प्राप्ति कर सकता है। मानवीय गुणों से सम्पन्न व्यक्ति ही समाज तथा देश की रक्षा कर सकता है। राधा की संवेदना का विकास मानव जाति तक सीमित न होकर यह मानवेतर प्राणियों तक प्रसरित है। राधा के व्यक्तित्व और चरित्र के इस निर्माण में कवि ने अपने समय और समाज का पूरा ध्यान रखा है। अर्थात, कवि ने अपने देश-काल में जनसेवा को सर्वोपरि माना है। तत्सम प्रधान खड़ी बोली में रचित इस काव्य का महत्व स्वयंसिद्ध है।

12.3.1 प्रिय प्रवास का उद्‌देश्य

जीवन और समाज के हित साधना से युक्त साहित्य रचना ही वास्तव में उत्द्भष्ट साहित्य रचना है। महान् कथाकार प्रेमचंद का यह कथन अक्षरशः सही है कि साहित्य उसी रचना को कहेंगे जिसमें जीवन की सच्चाई प्रकट की गई हो। अर्थात् जो जीवन एवं समाज के लिए एक नयी और सही राह दिखाता हो। हिंदी साहित्य को रचने वाले महान् साहित्यकारों ने भिन्न-भिन्न कालों में ऐसे ही महत्वपूर्ण साहित्य की रचना की है। ऐसे साहित्यकारों में हरिऔध का भी नाम शामिल है। कृष्ण भक्ति परंपरा के अनुकूल रचे गए काव्य रचनाओं की श्रृंखला में ''प्रिय प्रवास'' को भी रखा जा सकता है।

किंतु इसका मुख्य उद्देश्य केवल कृष्ण भक्तों को कृष्ण की गाथा सुना कर प्रसन्न करना ही नहीं बल्कि इससे हटकर और भी महत्वपूर्ण उद्‌देश्य को स्पष्ट करना है। इस संदर्भ में पाठ में आपने स्वयं हरिऔध के कथन को पढ़ा है। उनका कथन है ''हम लोगों का एक संस्कार है.....

मैंने श्री कृष्ण को इस ग्रंथ में एक महापुरुष की भांति अंकित किया है, ब्रह्म करके नहीं।''

इससे स्पष्ट है कि वे समयानुकूल ही काव्य रचना कर रहे थे। कृष्ण को उन्होंने एक जननायक एवं सच्चे नेता के रूप में प्रस्तुत किया है। कृष्ण गोकुल से मथुरा जाते हैं। वहां उनका कार्य राजनीति को संभालना है। वे वापस कभी नहीं लौटते। यह इसी बात का संकेत करता है कि व्यक्तिगत प्रेम से बढ़कर राष्ट्र प्रेम महत्वपूर्ण है। मथुरा में कंस तथा शिशुपाल एवं देश के कई भाग में जरासंध जैसे आतताइयों ने अराजकता एवं आतंक फैला रखा था। जनता इनके अत्याचार से कराह रही थी। कृष्ण इन सबका संहार करते हैं। उनके व्यक्तिगत प्रेम से बढ़कर राष्ट्र प्रेम है। कवि स्वयं कहता है-

स्वजाति की देख अतीत दुर्दशा
विगर्हणा देख मनुष्य मात्र की।
विचार के प्राण-समुह कष्ट को,
हुए समुत्तेजित वीर केसरी।
आगे कृष्ण का चिंतन है यह वास्तव में कवि का ही चिंतन है-
विपत्ति में रक्षण सर्वभूत का,
सहाय होना असहाय जीव का।
उबारना संकट से स्वजाति को
मनुष्य का सर्वप्रधान धर्म।
राष्ट्र में व्याप्त समस्याओं के प्रति उनकी चिंता है-
पेचीदे नव राजनीति पचड़े जो वृद्धि हैं पा रहे।

यात्रा में ब्रजभूमि की अहृद वे हैं विघ्नकारी बड़े।
आते वासर हैं नवीन जितने लाते नये प्रश्न हैं।
होता है उनका दुरूहपन भी व्याघातकारी महा।

उपरोक्त पंक्तियां वास्तव में तत्कालीन राजनीतिक नेताओं से ही जोड़कर लिखी गई। कवि अंग्रेजों के खिलाफ आंदोलन कर रहे भारतीय नेताओं में जोश दिलाने का ही प्रयत्न कर रहा था। काव्य में 'वनदाह' की घटना का वर्णन कर कवि तत्कालीन उस गलती की ओर लोगों का ध्यान दिलाने चाहते थे जब लोग क्रोध में व्यक्तिगत द्वेश से राष्ट्र की संपत्ति का भी नुकसान करते थे। ऐसे विनाशकारी तत्वों को ललकारे हुए कृष्ण का यह कथन बहुत ही महत्वपूर्ण है -

अतः सबों से यह श्याम ने कहा
स्व जाति उद्धार महान् धर्म है।
चलो करें पावक में प्रवेश औ।
सधेनु लेवें निज जाति को बचा।

जो अपने प्राणों का भय करता है वह न तो सच्चा नेता है और न ही उससे कोई राष्ट्रहित होने वाला है। कृष्ण कहते हैं -

बिना न त्यागे ममता स्व-प्राण की
बिना न जोखों-ज्वालादाग्नि में पड़े।
न हो सका विश्व महान-कार्य है।
न सिद्ध होता भव जन्म हेतु है।

राष्ट्रीय आंदोलन के समय नेता बिन प्राणों का मोह किये संघर्ष में कूद पड़े अपने भाषणों में वे लोगों में प्राण मोह त्यागने की बात कहते थे। राष्ट्र के लिए प्राण त्यागने से अमृत एवं ख्याति मिलेगी यही संदेश वे दिया करते थे। 'प्रिय प्रवास' में हरिऔध ने कृष्ण के मुख से ऐसा ही संदेश कहलवाया है -

''बढ़ों करो वीर स्वजाति का भला,
अपार दोनों विध लाभ है हमें।
किया स्व कर्तव्य उबार भी लिया।
सु-कीर्ति पाई यदि भस्म हो गये।''

काव्य करना ही महत्वपूर्ण है विपत्तियों से घबड़ा कर बैठ जाना कायरता है। परंपरागत कृष्ण कथा में यह दिखाया जाता रहा है कि अतिवृष्टि के समय कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को उठा कर गोकुलवासियों की रक्षा की। लेकिन प्रिय प्रवास का कृष्ण ऐसा नहीं करता। वह लोगों को इस विपत्ति से उबरने के लिए कड़ी मेहनत का उपदेश देता है। शिथिलता अर्थात् अर्कमण्यता से दूर होने के लिए कवि का कहना है --

विपद से वर-वीर समान जो,
समर अर्थ समुघटहो सका।
विजय भूति उस सब काल ही।
वरपा है करही सु-प्रसन्नता हो।
लोक सेवा को कवि ने स्वर्ग सुख तथा राज सुख से उत्तम बताया -
भू में सड़ा मनुज है बहु मान पाता,
राज्याधिकार अथवा धन द्रव्य द्वारा।
होता परंतु वह पूजित विश्व में है।
निरूस्वार्थ भूत-हित और कर लोक सेवा।''

तत्कालीन समय में कुछ स्वार्थी भारतीयों ने अंग्रेजों का साथ दिया। लालच के कारण उन्होंने शासकों के साथ मिलकर अपने ही भाइयों पर अत्याचार किया। ऐसे दुर्जनों को दण्ड देना उचित है -

क्षमा नहीं है खल के लिए भली
स्माज उत्सादक दण्ड योग्य है।
कुकर्म कारी नर का उबारना
सु-कर्मियों को करता विपन्न है।

अंत में कवि ने विश्व प्रेम को स्थान दिया है। कृष्ण राधा व्यक्तिगत प्रेम से ऊपर उठ जाते हैं। कृष्ण राज्य की सेवा के लिए समर्पित हो जाते हैं और राधा ग्राम सेविका बन जाती है। मानव-प्रेम या विश्व प्रेम के बारे में कृष्ण का कथन है -

वे जी से हैं अवनिजन के प्राणियों के हितैशी
प्राणों से है आधिक उनको विश्व का प्रेम
राधा ग्राम सेविका से देवी बन जाती है -
वे छाया थीं सु-जन सिर की शासिका थी खलों की।
कंगालों की परमनिधि थीं औषधि पीड़ितों की।
दोनों की बहिन, जननी थी अनाथश्रितों की।
आराध्या थी ब्रज अवनि की प्रेमिका विश्व की थी।

इस प्रकार ''प्रिय प्रवास'' रचना के माध्यम से कवि ने राष्ट्रीय जागरण को ही स्थान दिया है। कथा भले ही पुराण से संबंधित है। लेकिन उस समय की राष्ट्रीय एवं सामाजिक समस्याओं के संदर्भ को ध्यान में रखकर ही घटनाओं तथा पात्रों की सृष्टि की गई है। इसलिए 'प्रिय प्रवास' का महत्व बना हुआ है।

बोध प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए-

1. 'प्रिय प्रवास' रचना में कृष्ण के चरित्र के प्रति स्वयं कवि का क्या कथन है?

   .....

   .....

   .....

   .....

2. मथुरा जाने के बाद कृष्ण गोकुल क्यों नहीं लौटते?

   .....

   .....

   .....

   .....

अभ्यास

1. कृष्ण एवं राधा ने व्यक्तिगत प्रेम के स्थान पर लोक कल्याण को अधिक महत्व दिया। प्रिय प्रवास के आधार पर इस कथन का उत्तर दस पंक्तियों में लिखिए।

12.4 उपयोगी पुस्तकें

1. डॉ. रामविलास शर्मा : भारतेन्दु हरिश्चंद्र और हिंदी नवजागरण की समस्याएँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
2. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
3. डॉ. नंदकिशोर नवल : आधुनिक हिंदी कविता का इतिहास, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली
4. डॉ. रामविलास शर्मा : हिंदी नवजागरण और महावीर प्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY